International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor:RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue5; September 2016; Page No. 01-03

नारी सशक्तीकरण : आर्थिक स्वावलम्बन

(छिन्नमस्ता उपन्यास के सन्दर्भ में)

Dr. Sarita Chauhan

Astt. Professor MCM DAV College for Women Sector 36A, Chandigarh, Punjab, India

प्रस्तावना

शताब्दियों पहले भवभूति ने लिखा था–

''अनिर्भिन्नो गभीरत्वादन्तर्गूढघनव्यथः।
पुटपाक प्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः ।।
(उत्तररामचरितम्, तृतीय अंक, श्लोक।)

अर्थात् गंभीर होने के कारण बाहर न प्रकाशित होने वाला भीतर ही भीतर छिपी हुई घनी पीड़ा वाला राम का करुण रस पुटपाक (दो पात्रों के मध्य में भली–भाँति बन्द कर पकायी जाने वाली औषधि) के सदृश है। और दुष्यन्त कुमार ने कुछ दशक पहले लिखा–

हो गई है पीर पर्वत सी पिघलनी चाहिए
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।
(साये में धूप)

भवभूति और दुष्यन्त दोनों मन में घुमड़ने वाली पीड़ा की चरम सीमा का वर्णन करते हैं पीड़ा चाहे व्यक्तिगत हो या सामुहिक चित्त की, इस गुबार का अपनी सीमाएँ तोड़कर बाहर आना व्यक्ति, समाज और देश के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक ही नहीं, अवश्यम्भावी भी है।''[1]

उपर्युक्त पृष्ठभूमि में नारी की स्थिति का अवलोकन करने के पश्चात् हम पाते हैं कि सत्ता और शक्ति पर एकधिकार एवं नियंत्राण बनाए रखने की प्रवृत्ति ने मनुष्य से उसकी मनुष्यता छीनी है। दोहन और शोषण आज के समाज के मूल्य बन गए है। आधुनिक समाज पितृक अर्थात् स्त्री विरोधी है। पितृक सत्ता ने दुनिया की आधी आबादी को अपना उपनिवेश बनाया, उन्हे स्वत्वहीन किया और उनका शोषण किया। बदलती परीस्थितियों में स्त्री ने अपने दमन एवं उत्पीड़न पर प्रश्न चिह्न लगाते हुए उनका पुरज़ोर विरोध किया। युगों से दबा लावा फूटा और स्त्री विमर्श का जन्म हुआ। इन सबका परिणाम यह हुआ कि नारी जीवन जो अभी तक हाशिए पर था वह केन्द्र में आ गया।

स्त्री –विमर्श क्या है और स्त्री–विमर्श में स्त्रियाँ आख़िर चाहती क्या हैं, इस विषय में ममता कालिया का कहना है – ''1. अस्तित्व, 2. अधिकार, 3. अस्मिता, 4. स्वाधीनता, 5. स्वावलम्बन6. समानता,7. सजगता, 8. आर्थिक स्वतंत्रता – ये मुद्दे नारीवादी आंदोलन के बुनियादी मुद्दे हैं।''[2] डॉ0 रोहिणी अग्रवाल स्त्री विमर्श को ''सह –अस्तित्व परक समाज की संरचना का मानवीय स्वप्न''[3] मानती हैं। सत्य तो यह है कि पितृसत्ता के दबाव, आर्थिक जटिलताओं एंव बदलते सामाजिक एंव मानवीय मूल्यों ने स्त्री –अस्मिता एवं अस्तित्व पर संकट खड़े कर दिये हैं, लिंग के आधार पर की जाने वाली असमानता का यह विमर्श निषेध करता है। पुरुषकर्त्ता है क्योंकि वह कमाता है और स्त्री क्योंकि वह आर्थिक रूप से सक्षम नहीं है अतः पुरुष की दासी है ऐसी बेसिर–पैर की बातों को यह विमर्श सिरे से ख़ारिज करता है।

सीमोन द बोउवार की 'द सेकिंड सैक्स' (1949) फ्रीडान की 'दी फेमिनिन मिस्टिक' (1963), केट मिलट की 'सेक्सुअल पॉलिटिक्स (1969), शुलामिश फायर स्टोन की 'दी डायलैटिस ऑफ सेक्स (1970), जुलियट मिशेल की 'वीमेन्स एस्टेट' (1971), शीला रोबाथम की 'वूमेन रेस्टिटेन्स एण्ड रिवोलुशन (1972) तथा मैरी डॉली की 'प्योर लस्ट' (1984) आदि अमर कृतियां हैं जिन्होने नारी –विमर्श को दशा और दिशा प्रदान करने में बहुत योगदान दिया है। नारी विमर्श को गति देने वाले आजादी के बाद के, हिन्दी उपन्यासों की बात करें तो हम पाते हैं कि इन उपन्यासों में नारी को तीन रूपों में चित्रित किया गया है। पहली ऐसी परम्परागत शोषित स्त्री है जो पितृसत्तात्मक शोषण का शिकार है और इस शोषण को वह अपनी नियति माने हुए है। दूसरी, वह स्त्री है जो आधुनिक युग की अनेकविध समस्याओं से जूझ रही है। तीसरी वह स्त्री है जो आर्थिक रूप से स्वावलम्बी होने की चाह एवं प्रयत्न में पितृसत्तात्मक व्यवस्था की जड़ मान्यताओं को चुनौती देने और राजनैतिक दृष्टि से सबलीकरण की दिशा में अग्रसर होने के लिए संघर्षरत है।

आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में नारी की आर्थिक स्वतंत्रता को बहुत महत्त्व दिया गया है। नारी के आर्थिक स्वावलम्बन को अत्यावश्यक बताते हुए रामविलास शर्मा कहते हैं, ''पढ़–लिखकर हर स्त्री को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने की ओर प्रवृत्त होना चाहिए। धन या पूंजी ही नियामक होती है, उसका केन्द्र जहाँ होगा शक्ति भी वहीं होगी और शक्तिशाली सबको दबाकर रखता है। स्वयं में जब शक्ति संग्रहीत हो जाएगी, तब न तो दूसरा दबा सकेगा न आपको दबने की आवश्यकता ही रहेगी। किसी क्षेत्र में किसी दृष्टि से अपने को कमजोर रखना व शक्तिशाली का मुखपेक्षी होना हमेशा दासता का कारण बनता है। इस स्थिति से नारी को मुक्त होना चाहिए।''[4] निस्संदेह अर्थ वह धुरी है जिस पर व्यष्टि–समष्टि एवं राष्ट्र परिचालित होता है, यही कारण है कि जब भी नारी के सबलीकरण, अस्मिता एवं अस्तित्व की सुरक्षा की बात होती है तब उसका आर्थिक रूप से स्वावलम्बी होना ज़रूरी माना जाता है।

प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी विषयक आर्थिक सबलीकरण का अध्ययन करने के पश्चात् हम पाते हैं कि उनके उपन्यासों की अधिकांश नारियाँ नौकरी या व्यवसाय में संलग्न हैं। छिन्नमस्ता उपन्यास के माध्यम से प्रभा खेतान समाज में हो रहे बदलावों पर बड़ा विमर्श रचती हैं। नारी की आर्थिक स्वतंत्रता को लेकर प्रभा पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था को कटघरे में खींचती हैं। वास्तव में हमारी पारिवारिक संरचना इतनी संशिलष्ट है कि यहाँ स्त्री कोई भी आर्थिक निर्णय नहीं ले पाती। स्त्री के आर्थिक सबलीकरण का उद्देश्य निस्संदेह एक ऐसे समतामूलक समाज की स्थापना है जहाँ अपनी–अपनी योग्यता के अनुसार स्त्री –पुरुष दोनों अपने वैयक्तिक विकास के साथ–साथ सुदृढ़ समाज के निर्माण की नींव रख सकें और भविष्य में ऊँचाइयों को छू सकें।

एक पुरानी कहावत है, ''औरत घर से निकली समझो हाथ से निकली।' यहाँ दो बातें है– हाथ और घर। कहावत बनाने वाला घर

को स्त्री के लिए सबसे सुरक्षित स्थान मानता होगा। हाथ का मतलब है नियंत्रण । इसी हाथ के नियंत्रण ने पुरुष को शोषक बनाया और स्त्री शोषित रहे ऐसी व्यवस्था दी।''[5] वास्तव में पितृक समाज के स्त्रियों के बारे में बहुत से पूर्वाग्रह रहे हैं। इनमें से एक है कि वे प्रतिभाहीन और अयोग्य होती हैं और रुपया–पैसा संभालना उनके बस की बात नहीं। सच्चाई तो यह है कि पारिवारिक मूल्यों, परंपराओ और संस्कृति के नाम पर स्त्री को उत्पीड़ित करना पितृक समाज का लक्ष्य रहा है, किन्तु ''पुरुष जहाँ स्त्रियों पर अपना वर्चस्व, प्रभुता चाहता है वहीं स्त्रियाँ वर्चस्व, प्रभुत्व न चाहकर अपना अस्तित्व, अस्मिता, अलग पहचान चाहती हैं। समानता का अधिकार चाहती हैं।''[6] यह समानता का अधिकार स्त्री के आर्थिक स्वावलम्बन से निश्चित रूप से प्राप्त किया जा सकता है।

स्त्रियों का सम्पत्ति, पूंजी के स्वामित्व से वंचित रहना ही उनके अधीनस्थ, अन्या होने का मुख्य कारण है। सम्पत्ति के स्वामित्व से वंचित वह इसलिए रखी गई है ताकि वह आर्थिक शक्ति न बन सके और पुरुष के अधीन बनी रहे। पितृसत्तात्मक समाज के इसी षडयन्त्र को उजागर करता है प्रभा खेतान का उपन्यास 'छिन्नमस्ता'। प्रभा जी का छिन्नमस्ता उपन्यास ''अन्य उपन्यासों की तुलना में अधिक चर्चित रहा है। स्वयं शीर्षक ही सूचित करता है कि स्त्री सर्वयुगीन दुर्भाग्यपूर्ण नियति की प्रखर व्यंजक है। पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था ने कथा नायिका प्रिया को बुद्धिहीन, मस्तकविहीन केवल नारी देह माना है । वह सिर्फ भोग्या है। प्रभुसत्ता उसकी मेधा, संवेदना को छिन्न–भिन्न करती रही है।''[7]

उपन्यास की कथावस्तु पर विचार करने से पूर्व हमें उपन्यास के शीर्षक, 'छिन्नमस्ता' एवं उपन्यास की नायिका प्रभा के परस्पर मिथकीय संदर्भ एंव सम्बन्ध को समझना अति आवश्यक है। पौराणिक कथाओं के अनुसार छिन्नमस्ता हमारी दस देवियों में पाँचवी देवी मानी जाती हैं। वह अपना कटा हुआ सिर अपने बायें हाथ में लेकर चलती हैं। उनकी लम्बी रक्तपान करती जीभ उन्हे भयंकर रूप प्रदान करती है। वास्तव में छिन्नमस्ता वह शक्ति है जो संसार को बनाती भी है और समय आने पर उसका विनाश भी कर डालती है। महाप्रलय से छिन्नमस्ता का विशेष सम्बन्ध है। इस मिथकीय रूपक को प्रिया के सम्बन्ध में देखने पर स्पष्ट हो जाता है कि प्रिया घर की पाँचवी पुत्री है वह अपने मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं को नष्ट करती हुई समस्त नारी जाति को स्वावलम्बन की राह दिखाती है। वह अपने पुत्र–मोह से बाहर आकर अपने पैरों पर खड़ी होती है और उन सभी परम्पराओं को छिन्न भिन्न कर डालती है जो उसके शोषण का कारण हैं। नारी जाति की स्वतंत्र अस्मिता को स्थापित करने के प्रयास में छिन्नमस्ता का मिथकीय सन्दर्भ बहुत ही प्रभावी बन पड़ा है। यहाँ प्रिया उस शक्ति की द्योतक है जो मानसिक एवं भावात्मक तौर पर मजबूत है। जो समाज को एक नयी राह, एक नया विकल्प देती है। उसका मसीहा कोई और नहीं वह स्वयं है।

प्रभा खेतान के उपन्यासों की अधिकांश नारियाँ आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए संघर्षरत हैं। प्रभा जी की यह स्पष्ट मान्यता है कि नारी आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी न होने के कारण आश्रिता बनकर रहती है। छिन्नमस्ता उपन्यास की नायिका प्रिया समाज की मर्दवादी सोच का बहिष्कार करती है। वह स्त्रियों को जड़ एवं उपभोग की वस्तु समझे जाने के पूर्वाग्रह के विरूद्ध है। उसका मानना है कि शिक्षा के प्रसार और आर्थिक स्वावलम्बन के कारण स्त्री में पितृसत्तात्मक व्यवस्था को पोषित करने वाली और शोषण में सहायक रूढ़ियों और परम्पराओं को उखाड़ फेंकने की चेतना जागृत हुई है। इसी कारण प्रिया आर्थिक रूप से सुदृढ़ होने के लिए जूझती है और अपने इस संघर्ष में सफलता प्राप्त करती है। उपन्यास में एक स्थान पर प्रिया कहती है– ''हाँ, टूटी हूँ, बार–बार टूटी हूँ.... पर कहीं तो चोट के निशान नहीं..... दुनिया के पैरों तले रौंदी गई, पर मैं मिट्टी के लोंदे में परिवर्तित नहीं हो पाई हूँ। अड़तालीस की इस उम्र में एक पूरी की पूरी साबुत औरत हूँ जो जिन्दगी को झेल नहीं रही बल्कि हँसते हुए जी रही है, जिसे अपनी उपलब्धियों पर नाज है।''[8] निस्संदेह यह सब प्रिया के आर्थिक रूप से सशक्त होने का ही परिणाम है।

यह एक कटु सत्य है कि स्त्री का आर्थिक सबलीकरण पुरुष के अहम् को चोट पहुँचाता है। प्रिया का पति नरेन्द्र हर सम्भव प्रयास करता है कि प्रिया अपना व्यवसाय बन्द कर दे। जब प्रिया इसके लिए राजी नहीं होती तो वह कहता है– ''दरअसल तुम्हे इतनी खुली छूट देने की गलती मेरी ही थी। मुझे पहले ही चिड़िया के पंख काट डालने चाहिए थे।''[9] प्रिया अपने द्वारा व्यवसाय शुरू करने के कारणों को स्पष्ट करते हुए कहती है– ''नरेन्द्र, मैं व्यवसाय रुपये के लिए नहीं कर रही। हाँ चार साल पहले जब मैने पहले–पहल काम शुरू किया था, मुझे रुपयों की भी जरूरत थी। पर आज मेरा व्यवसाय मेरी आइडेंटिटी है। यह आए दिन की विदेशों की उड़ान..... यह मेरी जिन्दगी के कैनवास को बड़ा करती है। नित्य नये लोगों से मिलना–जुलना, जीवन के कार्य जगत को समझना। मुझे जिन्दगी उद्देश्यहीन नहीं लगती।''[10] इस पर नरेन्द्र का व्यंग्यबाण पितृसत्तात्मक व्यवस्था की नारी के प्रति सोच को व्यक्त करता है। नरेन्द्र कहता है– ''तुम यह क्यों नहीं कहती कि तुम्हे अकेले मौज करने की आदत पड़ गई है।''[11] प्रिया के यह कहने पर कि तुम भी मेरे साथ चला करो तो तुम्हे पता चल जाएगा कि मैं काम करती हूँ या मौज, तो वह कहता है– ''मैं और वह भी तुम्हारे साथ चलूँ? तुम्हारे पीछे–पीछे? तुम्हारे सैंपलों का बक्सा ढोता हुआ?''[12] नरेन्द्र प्रिया को अल्टीमेटम देते हुए कहता है कि यदि तुम आज काम के लिए गई तो वापिस घर में मत आना। वह कहता है– ''यह मत भूलो प्रिया कि मैं पुरुष हूँ, इस घर का कर्ता। यहाँ मेरी मर्जी चलेगी, हाँ सिर्फ मेरी।''[13]

मायके और ससुराल दोनो परिवारों में ऐश्वर्य पूर्ण वातावरण होने के बाद भी वह हाशिए का जीवन जीती है। फिलिप के पूछने पर कि तुम्हे ऐसी क्या कमी थी जो तुम्हे व्यवसाय करना पड़ा, प्रिया बताती है, ''हर चीज़ के लिए नरेन्द्र से पैसे माँगना और फिर हिसाब देना। रोज की झकझक।''[14] नरेन्द्र अक्सर ही प्रिया को पैसों का मोहताज बनाकर रखता और ताने देता कि ''कमाकर लाओ तो पता चलेगा।''[15] जब प्रिया कमाने लगती है तो वह उस पर नियंत्रण खो देने के भय से हिंसक हो जाता है। छिन्नमस्ता उपन्यास में प्रभा जी का विरोध उस व्यवस्था से भी है जिसमें पारिवारिक सत्ता एक व्यक्ति के हाथ में केन्द्रित होकर रह जाती है तथा परिवार के अन्य सदस्य हाशिए पर चले जाते हैं। परिवार में बहुधा ही पुरुष एक निरंकुश शासक होता है अतः परिवार में शोषक और शोषित दो वर्ग हो जाते हैं। प्रिया इसी स्थिति की ओर संकेत करते हुए कहती है– ''हमारे घर में दो दल थे– एक दलनकारियों का खेमा, जिसके हाथ में सेफ की चाबी थी, जिसको जुकाम होते ही डॉ0 गांगुली तो क्या सौ रुपये की फीसवाले डॉ0 नलिनीरंजन दत्ता तक को बुलाया जाता, जिसका घर की हर चीज पर पहला हक था। इस दल में माँ, बड़े भैया, बड़ी भाभी, उसका छोटा सा चार–पाँच साल का बेटा, सल्लो जीजी और मुझसे बड़ी डॉक्टरी पढ़ती सरोज। दलित वर्ग के खेमे में गिनती थी मेरी और छोटे भैया की जो किसी भी समझौते को मानने को तैयार नहीं होते।''[16] यहाँ संकेत है कि जो वर्ग आर्थिक रूप से सबल है अथवा सबल होने के नजदीक है और जिसका अर्थ पर नियंत्रण है वह वर्ग सुख–सुविधा का जीवन जीता है। समाज उसी के इशारे पर चलता है। नरेन्द्र एंव प्रिया का बड़ा भाई इसी श्रेणी में आते हैं।

शोषण का प्रतिकार निस्संदेह आवश्यक है फिर चाहे वह किसी भी स्तर का हो, किसी के भी द्वारा हो। डॉ0 चैटर्जी प्रिया को मानो मूलमंत्र देते हुए कहते हैं– ''स्त्री होना कोई अपराध नहीं है, पर

नारीत्व की आँसूभरी नियति स्वीकारना बहुत बड़ा अपराध है।''[17] प्रिया जब नीना से पूछती है कि क्या तुम दुखी नहीं हो तो नीना कहती है– ''यदि दुखी हूँ तो सुख भी अर्जित करूंगी। अपने पैरों पर खड़ी स्त्री का कोई निरादर नहीं कर सकता।''[18] सभी विपरीत परिस्थितियों से लड़कर आर्थिक रूप से सशक्त हुई प्रिया अपने साथ जुड़े अनेक लोगों के परिवारों का भरण–पोषण करने में सक्षम हो जाती है। वीरेन प्रिया से कहता है– ''दीदी आपके ऊपर हम दो सौ लोगों की भात की हंडी चढ़ती है। आप अकेली नहीं हैं।''[19]

फिलिप के रूप मे प्रभा जी ने एक ऐसे आदर्श पुरुष को गढ़ा है जिसका साथ हरकामकाजी महिला को अभीष्ट है। वह प्रिया पर विश्वास कर उसे काम देता है और उसे एक ऐसे व्यक्तित्व में परिवर्तित कर देता है जो आत्मविश्वास से भरपूर है और अपने लिए निर्णय ले सकने की क्षमता रखता है। वह प्रिया से कहता है – ''पता नहीं तुम भारतीय स्त्रियाँ अपने को प्यार क्यों नहीं कर पाती। तुमने अपना पैसा खुद कमाया है। क्या सुख का इतना भी अधिकार तुम्हे नहीं और ख़ासकर उस वक्त, जब तुम बीमार हो?''[20] प्रिया फिलिप को बताती है, ''मेरा अपना काम, जिसमें मुझे सृजन और अभिव्यक्ति का सुख मिला है, मेरा सबसे बड़ा आलम्बन है, यही वह एक बालिश्त जमीन है जिस पर कभी मैने मुट्ठी भर बीज रोपे थे। यह पौधा छोटा ही सही, पर इसे मैने सींचा है।''[21] प्रिया का यह वक्तव्य आर्थिक स्वावलम्बन से प्राप्त होने वाली सुरक्षा, आत्मविश्वास और उन्नति को दर्शाता है। प्रिया की उन्नति को देखकर नरेन्द्र ईर्ष्या से भर उठता है। प्रिया जब नरेन्द्र को कहती है कि वह पैसों के लिए काम नहीं कर रही तो नरेन्द्र व्यंग्यबाण छोड़ते हुए कहता है, ''रात–दिन पोथे पढ़–पढ़कर और पगला गई हो। आखिर तुम ऐसी कौन सी जीनियस हो प्रिया? दो अक्षर पढ़ क्या लिए.....,''[22]

छिन्नमस्ता उपन्याय के माध्यम से प्रिया प्रश्न उठाती है कि– औरत के लिए यह समाज इतना निर्मम क्यों? और इस समाज को बनाने वाला पुरुष इतना कायर क्यों?''[23] प्रिया का यह प्रश्न बहुत ही वाज़िब है। क्यों पुरुष को हमेशा ही दबी–सहमी, प्रताड़ित और कदम–कदम पर पुरुष का मुँह जोहती स्त्री ही पसंद आती है? उसका सबलीकरण उसे भयातुर क्यों कर देता है? निस्संदेह लैंगिग समानता नारी–सशक्तीकरण का आधार है। इस समानता को अपनाकर सहअस्तित्व परक समाज की संरचना का मानवीय स्वप्न देखा जा सकता है। यह विडम्बना ही है कि नारी सबलीकरण के प्रयासों को समाज संस्कृति का अवमूल्यन मानकर बराबर ख़ारिज करता आया है। सच्चाई तो यह है कि आर्थिक सम्बंधों को बदले बिना नारी सशक्तीकरण का विचार मात्र प्रवंचना है। आर्थिक पराधीनता के कारण ही समाज में दोहरी नैतिकता का जन्म होता है और यह दोहरी नैतिकता नारी के शोषण का मूल बिन्दु है।

एक सहअस्तित्व परक समाज की कामना करते हुए विषय का समाहार कवि सुदामा पांडेय धूमिल की पंक्तियों से करना श्रेयस्कर होगा जिसमें उन्होने दीनता–हीनता की भावना को तिलाँजलि दे स्वाभिमान के साथ जीने का संदेश दिया है–

''मैं फिर कहता हूँ कि हाथ में
गीली मिट्टी की तरह हाँ–हाँ मत करो
तनो
अकड़ो
अमरबेलि की तरह मत जियो
जड़ पकड़ो
बदलो, अपने आपको बदलो''[24]

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची

1. बनास जन, आख्यान में अखिलेश संपादक–राजीव कुमार प्रकाशन–कनिष्क अपार्टमेन्ट, ब्लॉक सी और डी, शालीमार बाग, दिल्ली अंक–11, जनवरी–जून 2015, पृष्ठ– 281
2. बनास जन, सम्पादक–पल्लव, प्रकाशन–कनिष्क अपार्टमेन्ट, ब्लॉक सी और डी, शालीमार बाग, दिल्ली, अंक–6, जनवरी–फरवरी 2013, पृष्ठ 208
3. इतिवृत्त की संरचना और संरूप, डॉ0 रोहिणी अग्रवाल, आधार प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड, पंचकूला (हरियाणा) प्रथम संस्करण–2006, पृष्ठ 280
4. स्त्री मुक्ति के प्रश्न, रामविलास शर्मा, गोदारण प्रकाशन, सुरेन्द्र नगर, अलीगढ़, प्रथम संस्करण–जनवरी 2012, पृष्ठ–61
5. जीने की राह, पं० विजय शंकर मेहता, दैनिक भास्कर (समाचार पत्र), अभिव्यक्ति, 23जून 2016, पृष्ठ –6
6. नारीवादी विमर्श, राकेश कुमार, आधार प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड, पंचकूला (हरियाणा), संस्करण–2011, पृष्ठ 53
7. हिन्दी उपन्यास साहित्य में स्त्री विमर्श एवं अन्य आलेख, डॉ० बी०के० कलासवा, प्रकाशक–भारत भारती, माल रोड़, दिल्ली, प्रथम संस्करण–2011, पृष्ठ–32
8. छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान, राजकमल प्रकाशन, प्रा० लि०, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण–2004, पृष्ठ 25
9. वही, पृष्ठ–11
10. वही, पृष्ठ–10–11
11. वही, पृष्ठ–11
12. वही, पृष्ठ–12
13. वही, पृष्ठ–13
14. वही, पृष्ठ–191
15. वही, पृष्ठ–194
16. वही, पृष्ठ–71
17. वही, पृष्ठ–117
18. वही, पृष्ठ–145
19. वही, पृष्ठ–161
20. वही, पृष्ठ–16
21. वही, पृष्ठ–212
22. वही, पृष्ठ–215
23. वही, पृष्ठ–147
24. कटघरे का कवि धूमिल, डॉ० गणेश तुलसीराम अष्टेकर, पंचशील प्रकाशन, फिल्म कॉलोनी, जयपुर, प्रथम संस्करण–1979, पृष्ठ–174।